॥ विदेश यात्रा विचार ॥

(अथवा)

सर्व मान्य शास्त्र वचनों से देशान्तर वा द्वीपान्तर में आर्य्य जाति के गमनागमन का विधान ।

—:-:—

श्रीराधा चरण गोस्वामी सम्पादित

त्वयाभिगुप्ताःविचरन्तिनिर्भयाः-
विनायकानीकपमूर्द्धसुप्रभो ।

(श्रीमद्भागवते)

सभी भूमि गोपालकी, या में अटक कहा ।
जाके मनमें अटक है, सोई अटक रहा ॥

(महाराज मान सिंह काबुल विजयी)

॥ विज्ञप्ति ॥

—:(o):—

॥ श्रीमथुरायां ॥
व्रजभूषण यंत्रालये मुद्रितः ।

प्रथम बार १,००० । मूल्य चार आने ।)

भूमिका ।

—:-o-:—

अब की बार जो मैं जातीय महा सभा (National congress) के द्वितीय अधिवेशन में प्रयाग मध्य हिन्दू समाज का प्रतिनिधि होकर कलकत्ते गया, तो वहां एक दिन कांग्रेस् में सिविल् सर्विस् का विषय लेकर विलायत जाने की चर्चा उठी, तो उस में बंगाल, बम्बई, और मन्दराज के हिन्दुओं ने प्रसन्नता पूर्वक विलायत जाना और वहां सिविल् सर्विस् की परीक्षा देना स्वीकार किया, परंतु यह अभागा पश्चिमोत्तर देश जो उन्नति में सब से पीछे पडा है, मनही मन में अकुलाता रहा, और इधर कुआ, उधर खाई देख कर चुपचाप जी में घुटा किया, और उन्नति का धन जो यूरोप में लुटता है, उस के लूटने से पीछे रहा । अन्त में जब रात्रि को इस देश के प्रतिनिधि लोग "प्रयाग मध्य हिन्दू समाज" (जो कलकत्ते में हीं हुई थी) में एकत्र हुए, तो यही विषय फिर छिड़ा, सभ्य लोगों में बहुत सा बाद विवाद हुआ, पर समय न मिलने से कुछ निश्चय न हुआ । यहां तक कि कांग्रेस् हो गया, और सिविल् सर्विस् कमीशन भी इस देश से चला गया, परन्तु पश्चिमोत्तर देश ने बे-धड़क हो कर नहीं कहा कि "लो हम विलायत जाते हैं गवर्नमेन्ट हमें क्या देती है ?" मेरा जो कुछ इस विषय में अभिप्राय था, वह मैं ने यदिच वहां प्रघट किया, परन्तु संतोष न हुआ । और यह गुब्बार हृदय में बढने लगा, यहां तक कि यह बीमारी बढ गई कि खाते, पीते, सोते, जागते, कई सप्ताह तक यही धुन रही । अन्त में जब चित्त बहुत विकल हुआ, तो काग़ज़ क़लम का आश्रय लिया, और यह प्रबन्ध लिखा !

बहुत अनुसन्धान किया, तो मालूम हुआ कि हमें विदेश यात्रा से रोकने वाले प्रथम ब्राह्मण पण्डित, द्वितीय जाति के मुखिया लोग, तृतीय आचार विचार हैं, शास्त्र की कोई आज्ञा नहीं कि विदेश मत जाओ । सो आचार विचार का प्रबंध तो हो सक्ता है, पर ब्राह्मण पाण्डित और जाति के पुराने बुड्ढे अन्ध परम्परा के आगे ब्रह्मा की भी नहीं मानते ।

समाज के अग्रणी, वाचालक सदैव सुशिक्षित होते हैं. इसी से महात्मा ऋषि लोग आगे समाज के नेता थे, वह देश, काल, पात्र देख कर धर्म शास्त्र वा स्मृति लिखते थे। उस में पुरानी वातें जो समय के प्रतिकूल होतीं थीं छोड देते थे। नई वातें जो समय के अनुकूल होतीं थीं, लिख देते थे। और फिर राजा की सभा में 'परीक्षा' हो कर वह 'कानून' पास होताथा, और जारी होता था । इसी से इतनी स्मृतियां वनी । आज कल के पुराने पण्डित भी उन की गद्दी पर हैं, परन्तु इन लोगों को उतनी विद्या वुद्धि नहीं । आप ये धर्म शास्त्र का शोधन करके प्रवृत्त करें यह तो इन को संस्कारही नहीं, ये तो अन्ध परम्परा के वशी-भूत हो कर सव व्यवस्था देते हैं । और फिर धर्म की मीमांसा कहां से करें । जन्म भर तो कौ-मुदी की फक्किका और न्याय के 'अवच्छेद कावच्छिन्न' में वीता, श्रुति स्मृ-ति पुराणादि जव काम पडा, देख लिया, फिर वस्तावन्द ! यदि कोई व्यव स्था हुई, जो दश ने लिखा आप भी मुट्ठी गरम करके हस्ताक्षर कर दिया। विचार ऐसी तैसी में गया ! रही समाज की उन्नति सो किस चिडिया का नाम है, जानतेही नहीं ! देश की क्या अवस्था है, उस की कैसे उन्नति होगी, यह तो स्वप्न में भी नहीं देखा ! मुझे वहुत से शास्त्री लोगों से काम पडा, परन्तु कोई भी देश की चिन्ता में मग्न न मिला । हमारे सुशिक्षि त लोग जिन वातों का आन्दोलन करते हैं. और जिस पर देश की उन्न-ति अवनति निर्भर है, इन वातों के विषय में पण्डित लोगों के कान पर एक जूँ भी नहीं रेंगती । देश, काल, पात्र, राजा, प्रजा के विषय में तो ये लोग निरे 'वछिया के वावा हैं,' तो भला ऐसे गोवर गणेशों से हमारी राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, अवस्था सुधरेगी ? तव फिर ऐसे लोगों की वातें जो वे-सिर पैर की हैं, सुशिक्षित समाज को कभी अन्ध बिश्वास से नहीं माननी चाहिये । हमारी अवस्था यदि सुधरी, वा सुधरेगी, तो पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, पण्डित महेशचन्द्र न्यायरत्न, स्वामी दयानंद सरस्वती, पण्डित विष्णु परशु राम शास्त्री, आदि पण्डितों के सदृश पण्डि-तों से, न कि वाल शास्त्री, विशुद्धानंद सरस्वती के टाइप् के पण्डितों से !

रहे बिरादरी के मुखिया लोग, वह तो बहुधा निरक्षर होते हैं, और भेडि-या धसान पर चलते हैं, और उन्हें एक दूसरे की फ़ज़ीहत बिना चैन हीं नहीं, उन से समाज की उन्नति और भी असम्भव है । फिर ऐसे कोमल विषय में इन दोनों श्रेणी के लोगों को अपना प्रदर्शक मान कर चलना अपने हाथ से अपने पांव में कुल्हाड़ी मारना है, अतएव इन दोनों दलों की बातें तो दूर ही से दण्डवत् करने योग्य हैं । परन्तु हमारी इन दोनों दलों से प्रार्थना है कि हमारे इस सत्य कथन के अपराध को क्षमा करके अपने सन्तानों की भविष्य दशा पर दृष्टि दे कर उन्हें विदेश यात्रा की आज्ञा दें. और वृद्धों के उचित कार्य्य करें, और इस भारत वर्ष की दीन दशा पर ध्यान दे कर इस की उन्नति का उपदेश करें । और निरास बुड्ढे की अपेक्षा आशावान् वृद्ध पुरुष बनें, जैसे कि (Old Man's Hope) नामक ग्रंथ कर्त्ता वृद्ध है, और अनंत काल स्वर्ग में बैठ कर देवताओं के साथ भारत वर्ष की उन्नति का अवलोकन करें ।

वृन्दावन,
१ फ़र्वरी सन् १८८७.

राधाचरण गोस्वामी ।
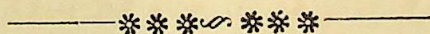
ओ३म्
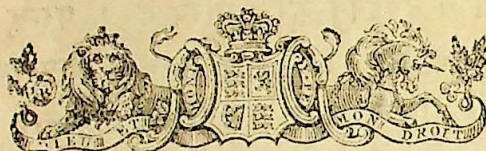
Printed at the "VRAJ BHUSHAN" Press, Mathura.

श्रीमथुरायां व्रजभूषण यन्त्रालये मुद्रितः ।

विदेश यात्रा विचार

———:(o):———

परमेश्वर के कोप से हिन्दू जाति इस समय एक ऐसे अदूर दर्शी अनुदार लोगों के दल के हाथ में हैं, जिस का जोडा सारे संसार में ढूँढा जाय तो 'रोम के पोप लोगों' के सिवाय दूसरा न निकलेगा। वह दल आज कल के दुराग्रही, स्वार्थी, देश के शत्रु, थोडे से ब्राह्मणों का है । जो अपने गर्व के आगे इन्द्र को खर्व, और अपने वचन को ईश्वर के वचन से भी अधिक माननीय समझते हैं । और आंखों के अन्धे वा कान के बहरे इतर हिन्दू लोग उन के ऐसे वशी-भूत वा गुलाम बन रहे हैं कि जो पण्डित जी, पुरोहितजी, पाधाजी, पोपजी कहेंगे, वही अपनी तीक्ष्ण बुद्धि को भौंडी करके मानेंगे । चाहें उन के वाक्य से ये लोग मिट्टी में मिल जायें चाहें उन के कहने से इन की संतान का सर्व नाश हो जाय, परन्तु यह वही करेंगे· जो इन के गुरु घोंघा पाण्डित अपने तम्बाकू से कटु मुख से कहेंगे, वा सुँघनी सें गन्दे दिमाग़ से सोचेंगे । भारत वर्ष की इतनी दुर्दशा क्यों हुई ? ऐसेही माहात्मा ब्राह्मणों के चरणों के प्रताप से । जितनी ख़राबी इस देश पर आई, वह ऐसेही दुर्विचार ब्राह्मणों के विचार और आचार से । यह सब स्वीकार करते हैं कि ब्राह्मणों से उपकार हुआ, परन्तु अपकार भी इन्हीं के थोडे भाइयों के बायें हाथ का कर्त्तब है । इतिहास पुकार कर साक्षी देता है कि अनेक मत मतान्तरों का प्रपञ्च इन्हीं ने फैलाया, और फिर उन का उदय अस्त भी इन्हीं से हुआ. इस उत्तरोत्तर उतरा चढ़ी में देश का कैसा सत्यानाश हुआ ? संस्कृत भाषा पढने से सर्व साधारण को किस ने रोका? मुसलमानों से लडने के समय हमें किसने मुहूर्त्त, और प्रारब्ध की जंजीर में बांध रक्खाथा ? राजा लोगों से युद्ध छुडा कर किस ने घंटों घंटा हिलवाया ? किस ने कलियुग कलियुग कह कर देश की उन्नति को रसातल पहुंचाया ? किस ने हमें हविष्य भोजी बना कर

भेड़ बकरी बना दिया ? किस ने हमें परलोक का सबुज़ बाग़ दिखला कर हमारे इस लोक की धन दौलत लूट ली ? किस ने छूआ छूत और चौका चूल्हा चला कर हमारा चौका लगा दिया, और हमें चूल्हे में डाल दिया ? किस ने हमें यंत्र, मंत्र, और ज्योतिष के जगद्वाल में 'पागल' 'वहमी' और 'असभ्य' बना दिया ? किस ने बाल्य विबाह को रच कर और पुनर्विवाह को रोक कर भारतवर्ष में साठ लक्ष बाल बिधवाओं को हमारी वज्रादपि कठोर छाती पर बिठला दिया ? और हा ! किस प्रपंची, धूर्त्त, प्रतारक, अज्ञानी समूह ने हमें समुद्र यात्रा से वंचित कर आज हमारा सभ्य समाज में काला मुँह कराया ? यही यही यही थोड़े से आग्रही ब्राह्मण हैं, जो हम को धर्म का धोखा दे कर हिन्दू जाति को परलोक का भय दिखला कर सर्व नाश करना चाहते हैं !!! हा हन्त ! हा हन्त !! हा हन्त !!!

हम उन ब्राह्मणों को हजारों प्रणाम करते हैं, जो देशकी, समाजकी, दुर्दशा के दमन करने में लगे हुए हैं. और हम उन सत्य वक्ता ऋषि लोगों के वाक्यों को श्रद्धा करते हैं, जो समयानु रूप समाज की सु-व्यवस्था करते रहे, परन्तु हम मिथ्याडम्बर, चतुर, दुराग्रह ब्राह्मणों की एक बात को भी नहीं मानेंगे, और न इन के कुटिल कटाक्ष, वा वानरास्फालन से डरेंगे क्योंकि देश और समाज की उन्नतिही अपने जीवन का व्रत है ।

प्रस्तुत वक्तव्य यह हैं कि हिन्दू लोग जो श्रुति स्मृति सम्मत धर्म को मानते, और वर्णव्यवस्था को पालन करते हैं यह लोग भारतवर्ष जो अटक से कटक और करांची से चटगांव तक विस्तृत है, इस के सिवाय २०,००० माइल् पृथ्वी में खुश्की वा तरी की राह से अन्य देशों में जा सक्ते हैं, वा नहीं ? और इन देशों में जाने से इन की धर्म हानि है वा नहीं ? इन दोनों प्रश्नों की मीमांसा निष्पक्ष होनी चाहिये ।

प्रथम इस के कि कुछ कहें यह देखना चाहिये कि यह प्रश्न क्यों हुआ इस का मूल यह कि हमारे पूर्वोक्त ब्राह्मणों, और इन के थोडे से अनुयायी क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रों ने यह प्रचार कर रक्खा है कि जो विदेश, वा इंग्लैंड आदि देशों में जायगा, वह जाति वहिष्कृत, धर्म से पतित हो कर म्लेच्छ

होगा। वाह ! बुद्धि के शत्रुओ ! वाह ! यदि इन का राज्य होता तो शायद् जो हिन्दू विलायत जाता, वह फांसी पाता। हम इस विषय में शास्त्रों के प्रमाण देने से पहिले इन ढपोल-शङ्खों की कपोल कल्पनाओं को खण्डन करते हैं।

प्रथम– यह लोग विदेश जाने की कुछ आवश्यकता नहीं समझते।

हमारा उत्तर यह है कि श्रीमती महारानी के सुख शान्ति मय राज्य में भारतवर्ष की प्रजा प्रतिदिन वढती जाती है, और इसी के साथ देश की उपज भी वढी है, परन्तु भारतवर्ष के वहिर्वाणिज्य के वढने से यहां से लाखों मन गेंहू, चावल, आदि अन्न वाहर जाता है, जिस से यहां रोज़ अकाल सा वना रहता है। और ग़रीवों के वहुत से रोज़गार कलों ने मार दिये, विचारे दिन रात कठिन से अपनी गृहस्थी का पालन करते हैं, और दूसरे टापुओं में उत्तम रोज़गार मिलता है, एक एक कुली २०) वा २५) रु० तक पाता है, तो अव वतलाइये कि यह यहीं पत्ते चवाकर अपने दिन काटें अथवा विदेश में जाय ? नीति में कहा है, 'स्वदेशो यत्र जीविका' वही स्वदेश है, जहां जीविका है, तो हर एक वुद्धिवान् कहेगा कि अवश्य अवश्य दूर देशों में जाय वहां धनोपार्जन करे, यहां भूखों न मरे। दूसरे रेल तार के होने से व्यापार की मुनाफा देश में नहीं है, जो कुछ लाभ है, वह विदेश के व्यापार से है. जव तक हम लोग स्वयं उन देशों में न जायेंगे तव तक वहां की यथावत् व्यापार की व्यवस्था नहीं जान सकें. विना गये नहीं कह सक्ते किस चीज़ की वहां ज्यादा कटती है ? किस चीज़ के वहां से यहां लाने में लाभ है ? वहां व्यापारियों के क्या तरीके हैं ! वहां किस ढंग से माल भेजने में सुभीता है! वहां क्या पड़ता माल पर पड़ेगा ! इन सव वातों को जो हम खुद न देख कर अंग्रेज़ व्यापारियों के भरोसे भूले पड़े हैं, और तत्व माल इन्हें दे कर उस के धोवन और मांड से अपना काल काटते हैं, यह क्या बुद्धिमत्ता है ? आज यदि अंग्रेज़ व्यापारी हिन्दुस्तानियों से किसी कारण से व्यापार छोड़ दें, वा दर कम कर दें, तो उस समय हम लोग सिवाय दांत पीसने के और क्या कर सक्ते हैं

क्यों कि विदेश तो हमने देखाही नहीं जो खुद वहां जाकर कोठी जमालें और अपने जहाजों पर माल लाद कर दिसावर भेजें? तीसरे हिन्दुस्तानियों को वह कल की विद्या जिस्से यूरोप आज मालामाल हो रहा है, बिल्कुल् नहीं आती, और उस्से जो देश को लाभ होता है, वा उस के विना देश की जो हानि होती है, उस को सव लोग जानते हैं, क्या यह कल की विद्या हम अपने इसी घोंसुए में वैठे वैठे जान लेंगे ? जो कोई हिन्दुस्तानी जाना चाहता है तो सव से प्रथम देश के शत्रु उस की गर्दन मारने को तैयार हो जाते हैं, और उस का उत्साह भंग कर देश का सत्यानाश करते हैं । चतुर्थ हमारे मुआमिले मुकद्दमों की आखिरी निष्पत्ति विलायत में होती है, अव हम चिट्ठियों से उन लोगों से भुगतान करते हैं । जो हमारी रीति रस्म कुछ नहीं जानते, न हमारी कुछ सुनते हैं न अपनी कुछ कहते हैं. अन्त में वहां से हजारों रुमये लगाकर भी हार जाते हैं तो क्या यह उचित नहीं कि हम आप वहां जा कर अपने मुक़द्दमें मुआमले सीधे करें और अपने हक़ को पहुंचे ? पांचवें सर्कारी नौकरी जिस्से एक तृतीयांश भारतवर्ष पल रहा है उस के वड़े वड़े पद विना विलायत में पढे नहीं मिल सक्के और बारिष्टर आदि की परीक्षा भी वहीं दे सक्के तो अव हिन्दू लोग आंखों पर पट्टी और कानों में तेल डाल कर तहखाने में पड़े रहें और मुसलमान हाई-कोर्ट के जज हो कर हिन्दुओं का शासन करें ? पार्सी कलेक्टर मैजिस्ट्रेट हो कर हिन्दुओं को जेल भेजें ? वंगाली वारिष्टर होकर हमारे हज़ारों रुपये छीन लें ? और हम इन का मुँह देखा करें । आगे चाहें डिप्युटी-कलेक्टर और सवार्डिनेट् जज भी विलायत फिरताही हों, और फिर धीरे धीरे वड़े वड़े मुहकमों में अपने विलायत फिरता भाइयों की मदद से मुसलमान, पार्सी, वंगाली ही भर जायें, परन्तु हिन्दू दास वही कौडी के तीन वने रहें ? क्या कोई अक़ल का दुश्मन ऐसा कह सक्ता है ? छठे भारतवर्ष की राज राजेश्वरी श्रीमती महारानी विक्टोरिया जो जगत् के एक तृतीयांश पर एक छत्र राज्य करती हैं, जिन के राज्य में सूर्य्य अस्त नहीं होता, वह अपने परिवार सहित इङ्गलंण्ड में ही विराजमान हैं, और वृद्धा-

बस्था के कारण इस देश में नहीं आसक्तीं, हमारे राजा महाराजा रईस लोग जो इन दिनों एजेन्ट और गवर्नरों की मुलाकात मेंही जन्म विता देते हैं, और तव भी अपने स्वार्थ को नहीं पहुंचते, क्या श्रीमती महारानी के दर्शन करके कृतार्थ नहीं होंगे ? और क्या भारतवर्ष की प्रजा ऐसी अभागी रहे कि अपनी दयामयी महारानी का दर्शन भी न करने पावें ? निस्सन्देह यदि हम लोगों को विलायत का मार्ग खुला रहै, तो सैकडों अत्याचारों से जान वचे। और हमभी वृटिश् जात प्रजा के समान सुखी रहें। सातवें–यह एकोनविंशति शताब्दी जिस में केवल १२ वर्ष वाकी हैं, जिस में यूरोप अमेरिका आदि देशों ने इतनी उन्नति की, विद्या का सूर्य मध्य गगन में चढता जाता है, इस समय हम लोग हिन्दुस्तान में ही 'कूप मण्डूक' वने पड़े रहें ? भला यूरोप की विद्या कला में वरावरी करना तो दूर, क्या उस देश को देख भी न सकें ? ऐसा क्या ईश्वर का अपराध हमने किया है ? आठवें–देशाटन से अनेक लाभ हैं, जिन को सव जानते हैं, और जो न जानें, वह वम्वई कलकत्ते तक जाकर देखलें, तो यूरोप आदि देशों में जानेसे क्या ज्ञान लाभ होगा नहीं कह सक्ते? ऐसे ऐसे अनेक कारणहैं, जिन से भारत वासी विशेषतः हिन्दुओं को विदेश अथवा विलायत यात्रा करना परम आवश्यक है, फिर भी यदि संकीर्ण हृदय के लोग कहें कि विदेश जाना कुछ आवश्यक नहीं तो कोई देश हितैषी नहीं मान सक्ता !

दूसरी–आशङ्का यह है कि जो लोग विलायत जाते हैं वह साहव वन आते हैं।

इस विषयमें इतनाहीं कहतेहैं कि विलायत वा इंगलैंड के सिवाय दूसरे देशोंमें जानेसे कोई साहव नहीं होता,तो वहां जाना चाहिये. अव यह देखना उचितहै कि इंगलेण्ड जानेसे जो साहव वन आतेहैं, वह ऊपर सेही साहव वनतेहैं वा भीतरसे भी ? जहांतक देखागया, वह वेष मात्रसे चाहें साहव वन जायें अन्तः करणमें उनके जो देश भक्ति और देशोन्नति की वासना और देश का पक्षपात है, वह वडे वडे दम्भ धारी हिन्दुओं में नहीं है ? क्या विलायत प्रत्यागत सुरेन्द्र वावू का शालिग्राम का पक्ष लोग भूल गये ! और यह जो

देशोन्नति की इतनी चर्चा है, इस के अग्रणी यही लोग हैं वा और कोई ? अब केवल वेष मात्र का दोष है, तो विलायत समान शीत देश में जाकर वह शीतोपयोगी कोट, पतलून हेट् आदि पहनें, तो कोई चिन्ता नहीं ! वस्त्र ऋतु के उपयोगी होते हैं । फिर जित जाति सदैव जेताके अनुकरण में प्रवृत्त होती है, यह प्राकृतिक नियम है, जैसे बहुतसी बातें हमने मुसलमानों से लीं, वैसेही अंग्रेजों से भी लें तो क्या दोष है ! फिर अंग्रेजी पोशाक तो अब स्वतः सिद्ध भारतवर्ष में घर घर छागई, बिचारे विलायत प्रत्यागतही यदि अंग्रजी पोशाक पहनें, और अनुकरण करें तो समाज से निकाले जाने के योग्य नहीं ।

तृतीय–विलायत जाने वाले बहुधा खाने पीने का आचार छोड देते हैं ।

इस के दोषी भी हम लोग ही हैं, क्यों कि जब विलायत जाने वाले को जातिच्युत कर देना यह एक नियम हीं हमने कर लिया है, और विलायत प्रत्यागत जातिच्युत हुए हैं तब वह जो चाहें सो खा सक्ते हैं । पर जब हम खाने पीने मात्र का आग्रह करके विलायत जाने को बुरा नहीं कहते तो कोई हिन्दू खाने पीने के लोभ से विलायत न जायगा ! कोई हिन्दू जान बूझ कर भ्रष्ट होना पसंद न करेगा । परंतु आश्चर्य तो यह कि शुद्धाचारी विलायत प्रत्यागत भी जातिच्युत किया जाता है ।

चतुर्थ–हिन्दू लोगों के आचार, विचार, दूसरे देशों में शुद्ध नहीं रहते

यह भी असंगत है । हां यहां के समान दूसरे देशों में सुविधा नहीं, परंतु वहां हिन्दू आचार विचार मात्र नहीं हो सक्ते, यह मिथ्या है । अफगानिस्थान में काबुल, कन्दहार में सैकडों हिन्दू हैं, ब्रह्मा में रंगून, और दूसरे स्थानों में सैकडों हिन्दू हैं, चीन के कई बन्दरों में हिन्दू रहते हैं, सिंहला वा लङ्का में अनेक हिन्दू हैं, अरब में ईडन में हिन्दू हैं, इस के सिवाय मारिशस् , ट्रिनिडाड सिंहापुर आदि टापुओं में हजारों हिन्दू जाते आते और रहते हैं, तो उन का धर्म निर्वाह कैसे होता है ! आचार सर्वत्र देश के अनुकूल होता है, हिन्दुस्थान में हीं कश्मीर आदि शीत देशों में लोग मही-

नों नहीं नहाते, पंजाब और सिंध में मुसलमानों के हाथ की छुई रोटी शुद्ध है, मारवाड में वासन जल से नहीं धुवते, बङ्गाल में मत्स्य भक्षण का सर्व साधारण प्रचार है, सम्पूर्ण भारतवर्ष में हिन्दू मुसलमान एक चिलम से तम्बाकू पीते हैं, तो क्या यह कदाचार नहीं ? ऐसा ही यदि विलायत में शीत के आधिक्य से कुछ नहाने आदि का विचार हो, तो कोई चाण्डाल न हो जायगा । बाकी सब हिन्दू आचार विलायत में हो सक्ते हैं । आटा चावल, घृत, दुग्ध, दधि दाल, बूरा आदि सब खाने की चीजें वहां मिलती हैं। जल चाहें नल का लो, चाहें नदी का पान करो । जैसा कि अब भी कलकत्ता, बम्बई आदि में करते हो । बाकी जो चीजें वहां न मिलें, यहां से डांक और जहाज पर जा सक्ती हैं । फिर हम नहीं जानते कि वहां जा कर हिन्दू लोग कौन सा यज्ञ करेंगे, जो नष्ट हो जायगा !

पांचवीं–आपत्ति यह कि जहाज पर सफर करने में जो दिन लगेंगे उन में कैसे धर्म रक्षा हो ।

यह कुछ कठिन नहीं, मेल के जहाज पर यदि विलायत जाओ, तो केवल २१ दिन लगेंगे, पीने मात्र को जल बम्बई से तांबे के बडे बडे पात्रों में भर लो । छोटे पात्र हों, तो दूसरे तीसरे दिन किनारों पर से भर लो खाने को मेवा, चना, सतुआ आदि अथवा आटा, चावल आदि शुष्क अन्न धर लो । रास्ते में बराबर रोटी करते जाओ, दम चूल्हा रक्खो, यदि म्लेच्छ संसर्ग से जहाज पर रोटी न करो, किनारे पर कर लो । और यदि माल के जहाज पर जाओ, तो पौबारह हैं, दो तीन महिने में पहुंचोगे, रास्ते में बहुत जगह ठहरना होगा, कुछ भी धर्म में बाधा न होगी । रहा जहाज का म्लेच्छ संसर्ग, वह नौकाओं पर तो सदा से हिन्दू लोग भोगते हैं, अब रेल पर भी होता है, इतने पर भी जी न मानें, अलग कमरा कर लो । फिर २१–२२ दिन का सफर कुछ कठिन नहीं, आगे जब रेल न थी, छः छः महिने रास्ता चलते थे, उस में कैसे धर्म रक्षा होती थी ? और यदि एक साथ बहुत से हिन्दू विलायत जायें, अथवा जाते आते रहें तो जहाज पर स्वतंत्र प्रबंध हो सक्ता है, कि जिस में कुछ भी अडचल न हो ।

अब जो हिन्दू लोग जगन्नाथजी, द्वारिकाजी, रामेश्वर आदि में जहाज पर जाते हैं, तो कैसे उस में धर्म निर्वाह करते, और आचार पालते हैं ! दूसरे देशों के जाने में भी वही आचार करें । अब जो देश में जहाज पर जाते हैं, बहुधा जहाज का पानी पीते हैं, यदि विलायत जाने में भी ऐसा अगसा करना पडा, तो प्रायश्चित्त से शुद्धी हो सक्ती है । जैसा कि डाक्टरी दवा पीने वालों की शुद्धी होती है । फिर कहा है कि "मार्गेशूद्रवदाचरेत्" मार्ग में शूद्र का सा आचरण करे तब भी निर्वाह है ।

छठी–आपत्ति क्या कुचोद्य है कि यदि हिन्दू दूसरे देशों में जाय जबरदस्ती मुसलमान, वा क्रिस्तान किया जाय ।

सर्वथा असंगत है । श्रीमती भारतेश्वरी के राज्य, वा यूरोप के किसी खण्ड में ऐसा कोई कानून नहीं । न एशिया में ही किसी असभ्य देश में भी ऐसी बिधि है । फिर ब्रटिश् गवर्नमेन्ट की प्रजा की रक्षा करने को सर्वत्र ब्रटिश् एजेन्ट मौजूद हैं ।

सातवींआपत्ति–यदि म्लेच्छ देश में कोई मरजाय तो उस का क्रिया कर्म कैसे हो ?

यदि वहां कोई साथी कर दें, तो उत्तम (१) नहीं घर के लोग यहां नारायण-बलि, वा पुतला विधान करके उस की मोक्ष कर दें । और गया पिण्ड दान करके उस को असद्गति से बचा लें । फिर विदेश में ही बहुधा ऐसा होता है ।

आठवीं आपत्ति–हिन्दू लोग न कभी विदेश में गये, न जाते हैं, न यह सदाचार है ।

यदि हिन्दू राजा कभी समस्त पृथ्वी के चक्रवर्त्ती थे, तो अवश्य वह सब देशों में गये थे । जैसा कि हम आगे सिद्ध करेंगे । अब जाने के

---

(१) अभी लन्दन में जो कई पंजाबी विद्यार्थी पढते हैं, उन का एक नौकर मर गया, तो सभों ने मिल कर उस का विमान बनाया और उसे शहर से तीन कोस पर नदी के तट पर दाह किया !

लिये पूंछते हैं, तो जङ्गवहादुर, कई राजा, महाराजा, बहुत से सर्कारी पल-टनों के हिन्दू सिपाही, इंगलेण्ड, फ्रांस, टर्की, हब्श, मिसर तक हो आये हैं, उन से किसी ने चूं नहीं की । कम्बख्ती विचारे गरीव विद्यार्थियों की है ! यदिच शास्त्र में कहा है कि 'नीचादप्युत्तमाम्विद्याम्' और विद्या के लिये अनेक कष्ट भी सहना लिखा है, पर क्या करें मूर्ख लोग वृथा बाधक हो जाते हैं ।

नवीं आपत्ति–यह कि जो विलायत जायगा, वह मेम से विवाह कर लेगा ।

यह तो खपुष्प बात है, विलायत में मेम लुटती नहीं, यदि किसी के घर में स्त्री मौजूद है, तो वहां विवाह होही नहीं सक्ता और न मौजूद हो, तब भी जबतक आजन्म भरण पोषण का कोई प्रबंध न हो, कोई मेम शादी न करेगी । सुतरां गरीब को तो सामर्थ्य से बाहर है । अमीर लोग तो यहां भी कोई कोई मेम वेश्या रखते, यदि वहां से भी एक ले आवें तो हम कहैंगे. मुसलमानी न सही, क्रिस्तानी सही । यदि उस के साथ खाना पीना हो, तो अवश्य दण्डनीय है ।

दशम–बडी भारी आपत्ति यह है कि शास्त्रों में न समुद्र यात्रा की विधि है, प्रत्युत्त दोष है, न किसी ने समुद्र यात्रा की, और किसी ने की, तो वह प्रायश्चित्त के भी योग्य नहीं, और जहाज पर चढना भी पाप है ।

इन प्रश्नों का उत्तर दिल्ली के परम प्रसिद्ध और सुप्रतिष्ठित पाण्डित श्रीविश्वेश्वरनाथजी गोश्वामीमहाशय नें अपने ' रत्नाकर सेतु ' नामक निबंध में परम उत्तम रीति से दिया है – तथापि हम सर्व साधारण लोगों के जानने के लिये कुछ शास्त्रीय वचन यहां लिखते हैं ।

ऋग्वेद संहिता अष्टक १ अध्याय ४ वर्ग २१ ऋक् ३ । ४ । ५ में यह कथा है कि 'तुग्रनामक कोई अश्विनी कुमार का प्रीय राजर्षि था , उसने द्वीपान्तर वर्त्ती शत्रूओंसे असन्त उपद्रुत होकर उनके जीतनेके लिये अपने पुत्र भुज्यु को सेना के साथ नाव पर समुद्र में भेजा , जब वह नाव समुद्र में बहुत दूर पहुंची, तो हवा से टूट गई, तब भुज्यु ने अश्विनी कुमारोंकी

स्तुति की, उन्हों ने सेना सहित भुज्यु को अपनी नावों पर बिठला कर तीन दिन रात में पहुंचा दिया।

वह ऋचायें अर्थ सहित यहां लिखते हैं, और यह अर्थ सायणा चार्य्य के भाष्य के अनुकूल है।

ऋ० अ० १ अ० ४ व० २१ ऋ० ३

तुग्रोह भुज्यु मश्विनो दमेघे रयिन्न कश्चिन्ममृवां अवाहाः ।
तमूहथुर्नौभिरात्मन् वतीभि रन्तरिक्ष प्रुद्भि रपोदकाभिः ३ ।

अर्थ-(ह) प्रसिद्ध है कि (तुग्रः) तुग्रने (भुज्युम्) भुज्यु को (उदमेघे) समुद्र में (अवाहाः) भेजा (कश्चित्) कोई (ममृवान्) मरने वाला (रयिन्न) जैसे धन को (अश्विना) हे अश्विनी कुमारो (तं) उसे (ऊहथुः) तुमने पहुंचाया (आत्मन् वतीभिः) अपनी (अन्तरिक्ष प्रुद्भिः) अन्तरिक्ष पर चलनेवाली (अपोदकाभिः) जल रहित (नौभिः) नावोंमे । ३ ।

ऋ० अ० १ अ० ४ व० २१ ऋ० ४.

तिस्रः क्षय स्त्रिरहाति व्रज द्भि र्नासत्त्या भुज्यु मूहथुः पतंगैः
समुद्रस्य धन्वन्ना र्द्रस्यपारेत्रिभीरथैःशतपद्भिःषडश्वैः ॥ ४ ॥

अर्थ-(नासत्त्यौ) हे अश्विनी कुमारो (भुज्युं) भुज्यु को (तिस्रःक्षयः) तीन रात (त्रिरहा) तीन दिन (अति ब्रजद्भिः) अति क्रमण करने वाले (पतंगैः) उडने वाले (शतपद्भिः) सौ पांव वाले (त्रिभीरथैः) तीन रथों से (समुद्रस्यार्द्रस्यपारे) गीले समुद्र के पार (धन्वन्) सूखे देश में (ऊहथुः) तुमने पहुंचाया ॥ ४ ॥

ऋ० अ० १ अ० ४ व० २१ ऋ० ५.

अनारम्भणे तदवीरयेथा मनास्थाने अग्रभणे समुद्रे ।
यदश्विना ऊहथु र्भुज्यु मस्तं शतारित्रान्नाव मातस्थिवांसम् ५

अर्थ-(अश्विना) हे अश्विनी कुमारो (अनारम्भणे) आलम्बन रहित (अनाास्थाने) भूप्रदेश रहित (अग्रभणे) पकडने को जहां कुछ नहीं उस में (तदवीरयेथाम्) तुमने वह विक्रम किया (समुद्रे) समुद्र में (शतारित्रा-

न्नावमातस्थिवांसम्) सौ वल्ली वाली नाव पर बैठे (भुज्युम्) भुज्यु को (अस्तमूहथुः) घर पहुंचाया।

ऋ० अ० १ अ० ४ व० २१ ऋ० २.

तंगूर्त्तयोने मन्निषः परीणसः समुद्रं न संचरणे सनिष्यवः।
पतिंदक्षस्य विदथस्य नूसहो गिरिन्नवेना अधिरोहतेंजसा ॥

अर्थ–(गूर्त्तयः) स्तुति करने वाले (नेमन्निषः) नमस्कार पूर्वक प्राप्त होने वाले (परीणसः) चारोंओर से व्याप्त (तं) उस इन्द्र को (अधिरोहतेजसा) स्तुति करते हैं (सनिष्यवः) धन की इच्छा करने वाले (संचरणे समुद्रन्न) संचरण में जैसे समुद्र को इत्यादि।

श्रीमद्भागवते १० स्कं० अ० ८७ श्लो० ३३.

विजितहृषीकवायुभिरदान्त मनस्तुरगंयइहयतान्तियन्तु
मतिलोलमुपायखिदः । व्यसनशतान्विताःसमवहा
यगुरोश्चरणम्वणिज इवाजसंत्यकृतकर्णधराःजलधौ ॥

अर्थ–इन्द्रियों की जीती हुई पवनों से जो अदान्त मन रूपी चंचल घोडे को वश में करने का यत्न करते हैं, वह इस उपाय से खेद पाते हैं, और सैंकडों दुःख उठाते हैं । क्यों कि उन्हों ने गुरु के चरण छोड दिये हैं। जैसे कि वणिक् समुद्र में नाव पर विना मल्लाह के।

मनु० अ० ८ श्लो० ४०६.

दीर्घा ध्वनि यथा देशं यथा कालं तरा भवेत्।
नदी तीरेषु तद्विद्यात् समुद्रे नास्तिलक्षणम् ॥

अर्थ–वडे मार्ग में देश और काल के अनुसार नावों का भाडा होना चाहिये। यह केवल नदी के तटों पर, परन्तु समुद्र में यह नियम नहीं है।

मनु० ७ अ० श्लो० १९२.

स्यन्दनाश्वैःसमेयुद्धे दनूपैनौद्विपैस्तथा।
वृक्षगुल्मावृतेचापै रसिचर्मायुधैःस्थले ॥

अर्थ—सम भूभाग में रथ घोड़ों से जलप्राय देश में नाव और हाथियों से, वन में धनुष से स्थल में खड्ग और ढाल से युद्ध करना चाहिये।

याज्ञवल्क्य अ० २ श्लो० २६६.

तरिकः स्थलजं शुल्कं गृण्हन्दाप्यः पणान्दश।

अर्थ—तरिक (नाव घाटों पर अधिकृत) स्थल का करले, तो दसपण दण्ड दे।

भविष्य पुराणे भीष्म युधिष्ठिर सम्वादे.

अस्ति या सर्व विख्याता कांचीसंज्ञा महापुरी।
तत्र राजा रत्नसेनो वभूवामिति विक्रमः॥
तस्य देशे ऽवसद् विप्रो वेद वेदाङ्ग पारगः।
देव स्वामी तस्य भार्य्या नाम्ना धनवती शुभा॥
तस्यां सजनया मास सप्त पुत्रान् शुभा न्वितान्।
एकां दुहितरं रम्यां नाम्ना गुणवती न्नृप॥
अत्रान्तरे द्विजः कश्चिद् भिक्षार्थी समुपागतः।

॥ द्विज उवाच ॥

इयं सप्तपदी मध्ये वैधव्यं समवाप्स्यति॥
सा सोमा रजकी जातिः स्थिति स्तस्याश्च सिंहले।
सायदा याति ते वेश्म तदा वैधव्य भंजनम्॥
इत्युक्त्वा ब्राह्मणो ऽन्यत्र गतो भिक्षा प्रतीक्षया।
धनवत्त्यपि पुत्रेभ्यः प्रोवाच वचनं तदा॥

॥ धनवत्युवाच ॥

अस्ति यस्य पितु र्भक्ति र्मातु र्वचन गौरवम्।
स प्रयातु सह स्वस्रा सोमा मानयितु न्द्रुतम्॥

॥ पुत्रा ऊचुः ॥

अंतरा दुस्तरः सिन्धुः शत योजन विस्तरः।
अशक्यं गमनं तत्र न क्षमा गमने वयम् ॥

॥ देव स्वाम्यु वाच ॥

अपुत्रः सप्तभिः पुत्रै रहं यास्यामि सिंहलम्।
शिवस्वामी कनिष्ठश्च पुत्रः प्रोवाच सन्नतः॥
मयितिष्ठति कः शक्तो गंतुं द्वीपंहि सिंहलम्।
प्रतस्थे सहितः स्वस्त्रा द्वीपं सिंहल संज्ञकम् ॥
सिंहल द्वीप मागत्य स्थितौ सोमा गृहान्तिके।
पार मुत्तारया मास क्षणेन द्विज पुत्रकौ ॥
प्राप्ताः कांचीम्पुरीं सर्वे * * * * * *

सारार्थ–कांची पुरी में रत्नसेन नाम राजा था, उस के देश में देव स्वामी नाम वेद वेदाङ्ग पारग ब्राह्मण था। जिस की स्त्री धनवती थी, जिस्से सात पुत्र और एक गुणवती नाम कन्या हुई, एक दिन कोई भिक्षार्थी ब्राह्मण आया, उसने गुणवती को देख कर कहा कि यह सप्तपदी में विधवा हो जायगी। सिंहल में सोमा नाम धोबिन है, यदि वह तुम्हारे घर आवे तो इसका वैधव्य जाय। यह कह कर ब्राह्मण तो भिक्षा को चला गया, धनवती ने लडकों से कहा जो पिता माता की वात माने वह वहन के साथ सोमा लाने को सिंहल जाय। लडकों ने कहा वीच में समुद्र वडा दुस्तर है, सौ योजन का विस्तार है, वहां हम नहीं जा सक्ते। तव देवस्वामी वोला "मैं सात लडके वाला हो कर भी अपुत्र हूं" तव छोटा लडका शिव स्वामी वोला 'मेरे रहते कौन सिंहल द्वीप में जायगा' वस वहन के साथ वह सिंहल को चला गया, वहां सोमा के घर के पास रहा। फिर क्षण भर में सोमा ने दोनों को पार उतार दिया, और कांचीपुरी पहुंचे।

गर्गसंहिता द्वारिका खण्ड अ० २

आनर्त्तो नाम राजा भूत् सूर्य्य वंशे महामनाः।
यन्नाम्नानर्त्त देशः स्यात् समुद्रे भीम नादिनि॥
रैवतो नाम तत्पुत्र श्चक्रवर्त्ती गुणाकरः।
राज्यं च कार स पुरी म्विनिर्माय कुशस्थलीम्॥

सारार्थ—आनर्त्त नाम राजा सूर्य्य वंश में हुआ, जिस के नाम से समुद्र में आनर्त्त देश है। रैवत उस का पुत्र चक्रवर्त्ती था, उस ने कुशस्थली वना कर राज्य किया।

गर्गसंहिता द्वारिका खण्ड अ० ९.

आनर्त्तो लक्ष वर्षान्तं तत्र राज्यं चकारह।

सारार्थ—आनर्त्त ने पुत्र पौत्र सहित एक लक्ष वर्ष तक वहां राज्य किया

श्रीमद्भागवत अष्टम स्कन्ध २४ अ०

सत्यव्रत राजानम्प्रति भगवद्वाक्यम्।

त्वन्तावदोष धीः सर्वाः वीजान्युच्चावचानिच।
सप्तर्षिभिः परिवृतः सर्व सत्वोपवृंहितः॥
आरुह्य महतीन्नावं विचरिष्यस्य विक्लवः।
एकार्णवे निरालोके ऋषीणामेववर्चसा॥

सारार्थ—तुम सब औषधि और वीज लेकर सप्तर्षियों के साथ बड़ी नाव पर वैठ कर समुद्र में अन्धकार में ऋषियों के तेज से विचरोगे।

वाल्मीकि विरचित रामायणे उत्तर काण्डे.

दक्षिणस्यो दधे स्तीरे त्रिकूटो नाम पर्वतः।
तस्याग्रेतु विशाला सा महेन्द्रस्य पुरी यथा॥
लङ्का नाम पुरी रम्या निर्मिता विश्वकर्मणा।

सारार्थ—दक्षिण समुद्र के तट पर त्रिकूट नाम पर्वत है, उस के आगे

जैसी महेन्द्र की पुरी वैसी लङ्का है। जिसे विश्वकर्मा ने बनाया।

पद्म पुराणे क्रिया योगसारे।

त्यज दुःख म्महावीर म्शृणु मद्वचनं शुभम्।
समुद्र पारे तरुण पुरन्दर पुरोपमा॥
प्लक्षद्वीपे ऽस्ति विख्याता दीव्यन्ती संज्ञयापुरी।
गुणाकरा व्हय स्तत्र राज श्रेष्ठो महायशाः॥
सुशीला नाम तद् भार्य्या सर्व लक्षण संयुता।
सुलोचना व्हया कन्या वीर! तत् कुक्षि सम्भवा॥
तत्समा सुन्दरी नास्ति त्वत्समो वीर सुन्दरः।
गृहाण ता म्विवाहेन स्वर्ग भोगं यदीच्छसि॥

सारार्थ–तुम दुःख को छोड दो, मेरी बात सुनों। समुद्र के पार पक्ष द्वीप में दीव्यन्ती नाम पुरी इन्द्र की पुरी के समान है। उसका गुणाकर नामक राजा है। उस की सुशीला भार्य्या है, उस की सुलोचना कन्या है, न तुम्हारे समान सुन्दर न उस के समान सुन्दरी, यदि स्वर्ग भोग की इच्छा करते हो, तो उस्से विवाह करो।

वृहद्धर्म पुराणे।

शाक द्वीपात् सुपर्णेन चा नीतो यः स देवलः।
शाक द्वीपी द्विजः सोऽभूद् विश्रुतो धरणी तले॥

सारार्थ–शाक द्वीप से गरुडजी जिस देवल नाम ब्राह्मण को लाये, वह शाक द्वीपी नाम से पृथ्वी पर ब्राह्मण हुआ।

भारते महा प्रस्थान पर्वणि।

क्रमेण ते ययुर्वीराः लौहित्यं सलिलार्णवम्।

सारार्थ–फिर वे क्रम से लौहित सागर (लाल समुद्र वा Red Sea.) को गये।

भारत सारे १४ अ०।

कृष्णार्ज्जुनौ गतौ लङ्कां याज्ञीये धन साधने ।

सारार्थ—श्रीकृष्ण, और अर्जुन, यज्ञ के धन लेने को लङ्का में गये ।

भारते सभा पर्वणि ।

स तेन सहितो राजन् सव्य साची परंतपः ।
विजिग्ये शाकल न्द्वीपं प्रतिविंध्यञ्च पार्थिवः ॥
शाकल द्वीप वासाश्च सप्त द्वीपेषु ये नृपाः ।
अर्ज्जुनस्यच सैन्यैस्तै र्विग्रह स्तुमुलोऽभवत् ॥

सारार्थ—उस के साथ अर्जुन ने शाकल द्वीप, और प्रति विन्ध्य कोभी जीता । शाकल द्वीप के वासी तथा और द्वीपों के वासी राजाओं के साथ भी अर्जुन की सेना का बहुत युद्ध हुआ ।

इससे अधिक श्रीरामचंद्रजी का दल बल के साहित समुद्र के बीच में लंका में जाना श्रीकृष्ण का समुद्र के मध्यमें द्वारिकामें सकुटुम्ब और सप्रजावर्ग रहना, बडे बडे प्रतापी राजा लोगोंका सातों द्वीपोंमें चक्रवर्ती राज्य करना सातों द्वीपोंमें शास्त्रानुसार ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रों का रहना, क्षीर समुद्र में श्रीनारायण का वास करना, देवता असुरोंका समुद्र मन्थन करना, प्रियव्रत के रथके चक्रसे सात समुद्रों की उत्पात्ति, सगर के पुत्रों का सागर खोदना, 'सरसा मस्मि सागरः' इस वचन से समुद्र का भगवद् विभूति होना आदि अनेक अनेक शास्त्रीय प्रमाण हैं कि जिस्से समुद्र का ब्यवहार, समुद्रोत्पन्न पदार्थों का व्यवहार, समुद्र में वास, समुद्र में गतागति सब हिन्दू लोगों की थी, और हिन्दू लोग ऐसे का पुरुष और कूप मण्डूक पहिले न थे, जैसे अब हैं । और उन का जाना आना ऊपर सप्त लोक, नीचे पाताल, पृथ्वी में लोकालोक तक था । किस की सामर्थ्य थी कि उन्हें रोके किस की शक्ति थी कि उन का धर्म बिगाडे ! और वह इन तुच्छ तुच्छ छूआ छूत आदि की बातों को (जो हम लोगों ने जैनियों से ली हैं) धर्म कर्म नहीं मानते थे, जिन को इदानीन्तन हिंदू मोक्ष का द्वारा मानते हैं ! फिर समुद्र जब परम पवित्र

और भगवद् विभूति है, तो उसमें जाने से कभी दोष नहीं लग सक्ता। जब समुद्र में भारत वर्ष के सब गंगादि तीर्थ मिले हैं, तब भी समुद्र नरक माना जाय? अस्तु जो पृथ्वी आज कलहैं, वह कोई नई नहींहै, सम्पूर्ण पृथ्वी जिस में एशिया, यूरोप, आफ्रिका है, जम्बू द्वीप के सिवाय कोई दूसरा द्वीप शास्त्रानुसार नहीं हो सक्ता, अमेरिका पाताल है, तो अब बतलाये कि जम्बू द्वीप में जाना, अथवा पाताल में जाना, हमारा किस ने रोका है ? रहा सिंधु के पार का निषेध, वह हमने नहीं सुना कि किस वेद की ऋचा है ? इतिहास से स्पष्ट है कि सिन्धु के दोनों पार हिन्दू लोगों का निवास था, अक्सस् नदी को इक्षु, कन्दहार को गांधार, जहां की गान्धारी थी, बुखारे को भूक्षार, शास्त्रों में लिखा है । इरावदी अबतक ऐरावती है । अभी थोडे दिन हुए, कास्पियन समुद्र के तट पर अरब के कबू शहर में एक बडा भारी देवी का मन्दिर मिला है । जिस में अबतक पंजाबी ब्राह्मण सेवा पूजा करते हैं । फिर शास्त्र में जो सैंकडों देशों के नाम लिखे हैं वह सब भारत वर्ष में नहीं आसक्ते ! फिर देश का दोष तभीतक माना जाता है, जबतक हिन्दू लोगों के चरण उस में नहीं पधारते, जहां वहां रहने लगे, फिर कुछ नहीं । देखिये कीकट (गया का प्रान्त) अङ्ग, वङ्ग, कलिङ्ग, सौराष्ट्र (सूरत) मगध, इन देशों में जाने वाले को पुनः संस्कार कहा है, पर अब तो ये तीर्थ समझे जाते हैं ! अब विपक्षों का एक बडा भारी दंश यह है कि निर्णय सिंधु आदि ग्रंथों में कलिवर्ज्य प्रकरण में यह वचन मिलते हैं ।

बृहन्नारदीय पुराणे ।

समुद्र यातु र्न स्वीकारः * * * . * *

इमान् कलियुगे धर्मान् वर्ज्याना हुर्मनीषिणः

आदित्य पुराणे ।

द्विजस्याब्धौतु नौयातुः शोधितस्यापिसंग्रहः ।

सारार्थ–समुद्र यात्रा करने वाले का स्वीकार न करना * * * *

इन धर्मों को बुद्धिवान् कलियुग में वर्ज्य कहते हैं और समुद्र में नाव पर यात्रा करने वाले द्विज को शुद्ध करके भी ग्रहण न करना ।

अब देखना चाहिये कि यह वचन मुख्य धर्म शास्त्र मन्वादि, वा कलि स्मृति पाराशरी आदि के नहीं हैं, बृहन्नारदीय पूराण, और आदित्य पुराण जो पुराण भी नहीं उप पुराण हैं, उन के हैं वो यह वचन कभी मान्य नहीं हो सक्ते । फिर यदि मान भी लें तो वहीं एक तीसरा वचन मिलता है

माधवीये पृथ्वी चन्द्रोदये ।

एतानि लोक गुप्त्यर्थं कलेरादौ महात्मभिः ।
निर्वर्त्तितानि विद्वद्भि र्व्यवस्थापूर्वकम्बुधैः ॥

सारांश—ये सब कलियुग के आदि में महात्मा विद्वान् पण्डितों ने व्यवस्था करके लोक की रक्षा के लिये छुडा दिये ।

इस्से स्पष्ट है कि कलियुग के पहिले यह सब बातें बन्द कर दी गईं तो अब कुछ भी सन्देह नहीं कि ये सब श्लोक कल्पित हैं, मूल ग्रंथों के नहीं । फिर जब एक समय के ब्राह्मणों ने कोई बात व्यवस्था से बन्द कर दी और उस में समय का ध्यान रक्खा, तो दूसरे समय के ब्राह्मण उस को समयानुकूल चला सक्ते हैं । इस में कोई बाधक नहीं । यह वचन अवश्य उस समय बने होंगे, जिस समय जैनी लोगों का टापुओं में जोर था, और ब्राह्मण जब्रन् बौद्ध बनाये जाते थे । इसी से 'शोधितस्य' पद है विशेषतः उस समय नौका की विद्या इतनी उन्नति न थी, इस्से उन को द्वीपान्तरों में धर्म नाश की शङ्का थी । परंतु अब जब कि सब देशों में डाक, तार, और ष्टीमरों का सुप्रबंध है । तब कुछ भी धर्म नाश का भय नहीं । बृहन्नारदीय पुराण का यह वचन कि 'समुद्रयातु र्न स्वीकारः' एक तो 'न' अक्षर बढने से छन्दो भङ्ग, और दूसरे 'समुद्रयातु र्न स्वीकारः' के अन्त में जब 'इमान् कलियुगे धर्मान् वर्ज्यानाहुर्मनीषिणः' यह कहा है, तो समुद्र यात्री का स्वीकार ही कलियुग में ठहरा । तृतीय अनेक निर्णय सिंधु की पुस्तकों में इस के स्थान में 'सगोत्रायाश्चस्वीकारः' पाठ है, जिस से बोध होता है कि चालाकों ने बदल कर 'समुद्र यात्रा स्वीकारः' पाठ

कर दिया । फिर इन वाक्यों में एक बडी गड़बड़ यह है कि कोई निवंध इन को क्रतु, कोई देवल, कोई आदि पुराण के बतलाते हैं, जिस्से इन के यथार्थ होने में वडा सन्देह है । वस्तुतः ऐसा मालूम होता है कि यह सब वाक्य 'नवदेद्यावनीम्भाषान्नगच्छेज्जैनमन्दिरम्' के समान किसी को कण्ठस्थ थे, निबंध कारों ने आंखें वन्द करके लिख दिये । फिर इन के पाठों में वडा व्यसय है । और यदि मान भी लें, तो सब समुद्र यात्री मात्र जातिच्युत हों, केवल विलायत वालों पर ही क्यों वज्र डाला जाता है ? फिर जो वात कि सदा से चली आती हो, उस का निषेध केवल दो वाक्यों से नहीं हो सक्ता । ऐसे विषय में भूरि भूरि श्रुति स्मृति के प्रमाण चाहिये । निर्णय सिंधु में जो–

आगार दाही गरदः समुद्र यायी च कुण्डाइयथ कूट कारी

इस श्लोक में मकान जलाने वाला, विष देने वाला, कुण्ड [पिता के जीते दूसरे से उत्पन्न] के घर रखने वाला, कपट करने वाला और समुद्र में जानें वाला ब्राह्मण श्राद्ध में भोजन के लिये निषिद्ध है, इस का मूल भारत का 'सामुद्रिको राज भृत्यस्तैलिकः कूटकारकः' श्लोक है, इस में 'सामुद्रिक' का अर्थ जो 'समुद्र यायी' किया है प्रथम तो सामुद्रिक शब्द का यह अर्थ हो नहीं सक्ता । सामुद्रिक से सामुद्रिक विद्या वाला ब्राह्मण वा समुद्र में द्वीपादि में रहने वाला ब्राह्मण ग्रहण होना चाहिये । [illegible]र ऐसा ही हो तो फिर अङ्ग, वङ्ग, कलिङ्ग, सौराष्ट्र, गुर्जर, आभीरु, [illegible]ंकण, द्राविड़, दक्षिणायन, आवंत्य, मागध, ब्राह्मण भी वर्ज्य हैं । फिर [illegible]ह क्यों मान्य हैं ? श्राद्ध में जितने ब्राह्मण, वर्ज्य और ग्राह्य हैं, यदि उन [illegible]र आधार हो, तो फिर कोई ब्राह्मण भोजन कराने को न मिले । रहा, यह कि व्यवहार मयूख आदि में व्यवसायार्थ द्वीपान्तर गत पुत्रों को भाग न मिलना लिखा है, वह कुछ उस की भ्रष्टता से नहीं, वरञ्च इस से कि उस के आने का असम्भव है, इस से वह खारिजहै, परन्तु अब जो बृटिश गवर्नमेन्ट का एक्ट प्रचलित है, उस में ऐसा कोई नियम नहीं, अतएव भाग न मिलने की आशङ्का दूरा पास्त है । एक और आशङ्का यह कि

मिताक्षरा में बौधायन का वाक्य है, जिस में समुद्र यान का प्रायश्चित्त कहा है यह प्रायश्चित्त तभी ठीक है, जब कि समुद्र यान का निषेध सिद्ध हो जब समुद्र यान का निषेध ही नहीं तो फिर प्रायश्चित्त नहीं हो सक्ता । फिर यह प्रायश्चित्त मूल, तथा अन्य स्मृति विरुद्ध है, और बौधायन मन्वादि स्मृति कारों में नहीं । और यदि तुष्यतु दुर्जन न्यायसे प्रायश्चित्त मान भी लें, तब भी कोई क्षति नहीं, जो विलायत जाय, वह प्रायश्चित्त वा उसके अनुकल्प में गोदान करके शुद्ध हो जाय बस तो अब हमारी बुद्धि में कोई दोष नहीं, जो विलायत जाने वा समुद्र यात्रा करने से हम लोग चूकें !

हे हमारे प्यारे हिन्दुओ ! इन झूंठे भ्रमों को छोडो, शास्त्र में विलायत जाना, वा समुद्र यात्रा करना कोई पाप नहीं, पातक नहीं, महा पातक नहीं, अनुपातक नहीं, इस का निषेध अन्ध परम्परा मात्र से है । वा बिरादरी के झगडों का एक झगडा है । हर एक बिरादरी में दो चार चौधरी पंच, मुखिया होते हैं, वह सदैव ऐसे झूंठे जाल बना कर रोटी चलाया करते हैं, वही लोग इस का निषेध करके कुछ मूँड लेते हैं । या दो चार धूर्त्त पण्डित है, जो धर्म के नाम से कुछ पैदा कर लेते हैं वह कोलाहल करते हैं, और किसी को आपत्ति नहीं । यदि कहो काशी के पण्डित व्यवस्था नहीं देते, तो थोडे से रुपये खर्च कीजिये जो चाहें सो व्यवस्था ले लीजिये । विश्वास न हो ‘ मांसामृतव्यवस्था ’ ‘ शालिग्राम के अदालत ले जाने की व्यवस्था ’ देख लीजिये । परंतु बंगाल, बम्बई, आदि के पण्डितों ने इस में व्यवस्थायें दी हैं । महाराजा बडौदा के भाई, कुंमार शिवराज सिंह (प्रयाग) महाराज कौंच विहार बाबू तेजनारायण सिंह (भागल पुर) मिष्टर श्यामजी कृष्ण वर्म्मा, दीवान रतलाम, ये सब विलायत हो आये, और अपनी अपनी जाति में शामिल हैं।

अन्त में हम अपने देश के राजा महाराजा वा रईसों से प्रार्थना करते हैं कि उन में से कोई ऐसा अग्रसर बने कि आप भी विलायत जाय और सौ दो सौ साधारण लोगों को भी ले जाय कि जिस्से यह अटक खुले । और यह हिन्दुओं के पावों की बेडी कटें । विशेष हमारे श्रीमान् लोग

कुछ द्रव्य की सहायता करें, तो लन्दन में एक धर्म शाला वन जाय, जिस्में हिन्दुओं को सवतरह से धर्म रक्षा में साहाय्य मिले। और वहां किसी तरह से आचार विचार में अन्तर न पडे। अव हम देखते हैं तो विलायत जाने की रुचि लोगों में प्रतिदिन वढती जाती है, और यदि विलायत प्रत्यागत ऐसे ही जातिच्युत किये जायेंगे, तो थोडे दिनों में ही हिन्दू समाज रसातल को चली जायगी। क्योंकि जो सुशिक्षित हैं, वही समाज के जीवन हैं, वही जब समाजमें न रहेंगे, तो फिर समाज निर्जीव हो जायगी।

अन्त में हम सर्व सक्तिमान जगदीश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वह हम हिंदू लोगों को आग्रह और अन्ध परमपरा के अन्धकार से निकालकर पूर्ण ज्ञाना लोक में पहुंचावै और हमें का पुरुष से महा पुरुष, कूपमण्डूक से समुद्रचारी महा मीन और गूलर के भुनगे से नन्दन वन का भ्रमर वनावै।

तथास्तु